REVIEW OF RESEARCH

सरगुजा रियासत का ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. रामरतन साहू[1] , आदित्य कुमार दास[2]

[1]विभागाध्यक्ष (इतिहास), डॉ. सी.वी.रामन ्विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)
[2]एम.फिल. शोध छात्र, इतिहास, डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 8 | MAY - 2019

सारांश

सरगुजा उत्तरी क्षेत्र की एक प्राचीन और महत्वपूर्ण रियासत है। इसकी भौगोलिक स्थिति के कारण यह चारों दिशाओं से प्रभावित रहा है। पौराणिक काल में यह राम के वनवास से जुडी रही है, वहीं गुप्तकाल में यह कालिदास के महाकाव्य मेघदूतं से संबद्ध है। यहां रामगिरी के सीताबेंगरा में प्राचीन नाट्यशाला स्थापित है। सरगुजा रक्सेल राजपूत वंश द्वारा शासित रियासत रही है। ईसा की तीसरी शताब्दी से इस वंश की वंशावली स्थापित है। ईसा पूर्व जहां यह नंद और मौर्य वंश के प्रभाव क्षेत्र में रहा, वहीं 10 वीं शताब्दी के बाद यह त्रिपुरी के कलचुरियों के अधीन था। 17वीं शताब्दी में यह मराठा शासन के अंतर्गत आया और 1818 से ब्रिटिश सरकार द्वारा संचालित हुआ। सरगुजा रियासत एक जनजातीय बहुल और भौगोलिक रूप से दुर्गम रियासत रही है। रामानुजशरण सिंहदेव द्वारा आधुनिक सरगुजा का निर्माण हुआ है। इसकी राजधानी पहले बिश्रामपुर थी जो 1906 में अंबिकापुर हुई।

मुख्य शब्द– रक्सेल, मेघदूतं, डीपाडीह, नाट्यशाला, पलामउ, कलचुरि, हाथी, उरांव, ताना भगत।

प्रस्तावना :

किसी भी देश समाज और सभ्यता का अतीत हमें बताता है कि मनुष्य का विकासक्रम क्या रहा है और उससे वर्तमान में किस तरह सबक लेकर सुधारवादी व्यवस्था स्थापित किया जाना चाहिए। इतिहास का अध्ययन एक जटिल प्रक्रिया है। यह वस्तुनिष्ठता एवं तटस्थता की मांग करता है। मनुष्य की बुद्धि का चमत्कार यह है कि उसने विगत 15 हजार वर्षों में ही जीवन यापन से लेकर अंतरिक्ष तक की यात्रा कर ली है। यह मनुष्य की बहुमुखी प्रतिभा और जीवन की रागात्मकता का उत्कर्ष है। इस तरह विभिन्न देश और काल में विभिन्न विषयों में अध्ययन होते रहे हैं। इतिहास भी एक ऐसा ही विषय है। ऐतिहासिक अध्ययन से नित नये तथ्य हमें प्राप्त होते हैं। मुख्य ऐतिहासिक केंद्रों की प्रचुर जानकारी तो है ही पर अभी बहुत कुछ जानना शेष है। विशेष रूप से जनजातीय क्षेत्रों में अभी भी इतिहास किंवदंतियों में मुखरित हैं और प्रामाणिक तथ्यों की बाट जोह रहे हैं। इसी क्रम में सरगुजा जो कि एक जनजातीय क्षेत्र है और छत्तीसगढ प्रदेश का उत्तरी भाग है, उसका अपना एक विशेष महत्व है। यहां का इतिहास प्राचीन है जिसे क्रमबद्ध और विहंगम दृष्टि की आवश्यकता है।

व्याख्या :

सरगुजा पहले कई नामों से जाना जाता रहा है। रामायण काल में यह दंडकारण्य कहलाता था वहीं यह दसवीं शताब्दी से डांडोर के नाम से जाना जाता रहा है। सरगुजा शब्द को लेकर कई स्पष्ट तथ्य का अभाव है। सरगुजा का भाव यह सुरगुंजा अर्थात आदिम लोकगीतों के मधुर गुंजन के अधिक समीप प्रतीत होता है। सरगुजा के नाम से कोई स्थल आज भी नहीं है वरन पूरे क्षेत्र को ही सरगुजा कहा जाता है। प्राचीन काल से यह अर्कसेल राजवंश द्वारा शासित रहा, फिर 1905 में बंगाल विभाजन तक यह

छोटा नागपुर कमिश्नरी के अंर्तगत था। तत्पश्चात यह मध्यप्रांत के अंतर्गत छत्तीसगढ के 14 कमिश्नरियों के अधीन हुआ। इसकी भौगोलिक स्थिति 20•38′ से 26•6′ उत्तरी अक्षांश तथा 82•31′से 84•5′ पूर्वी देशांतर के बीच अवस्थित है। वर्तमान सरगुजा संभाग में कुल चार रियासतें थीं। सबसे बडी रियासत सरगुजा रियासत थी। दूसरा जशपुर रियासत, जो प्राचीन काल मे डोम राजाओं द्वारा शासित थी। तीसरा रियासत कोरिया, जो प्राचीन काल में कोल आदिवासियों द्वारा शासित थी और चौथा रियासत चांगभगखार थी। इनमें सरगुजा रियासत वर्तमान में भारत के छत्तीसगढ राज्य के उत्तरी क्षेत्र में अवस्थित है। इसका कुल क्षेत्रफल 16359 वर्ग किमी है। सरगुजा रियासत क्षेत्र प्रकृति से अत्यंत समृद्ध है। बताया जाता है कि भगवान राम ने अपने वनवास का कुछ दिन पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ यहां व्यतीत किया था। एक किंवदती यह भी है कि महाकवि कालिदास ने यहीं पर रामगिरि पर्वत पर अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'मेघदूतम्' की रचना की थी। सरगुजा क्षेत्र की मूल आबादी उरांव, पंडो और कोरवा जनजाति की है।

सरगुजा क्षेत्र का इतिहास प्राचीन है। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में यह रियासत मगध के नंद वंश के अधीन था तदोपरान्त मौर्यों के अधीन हुआ। आगे चलकर यह कलचुरियों के आधिपत्य में आ गया। हालांकि यहां द्रविड वंशीय छोटे–छोटे राजाओं का भी शासन रहा जो आपस में लडते रहते थे।

सरगुजा कभी त्रिपुरी के कलचुरियों के आधिपत्य में रहा था। वर्तमान लखनपुर लक्ष्मणराज द्वितीय और शंकरगढ़ उसके ज्येष्ठ पुत्र शंकरगण त्रिपुरी कलचुरी राजाओं के नाम पर ही स्थापित किये गये हैं। शंकरगण वैष्णव था जबकि उसके पूर्वज शैव थे। उधर 16 वीं शताब्दी में वर्तमान झारखंड के पलामउ (पलामू) जिले के कुंदरी के अत्यंत प्राचीन राजवंश के रक्सेल राजपूत राजाओं ने शासन किया।

एक नाटकीय घटनाक्रम में पलामउ का रक्सेल राजा मानसिंह तत्कालीन सरगुजा राजपरिवार से अपनी पुत्री के व्याह के लिए सरगुजा आया था। तब उधर चेरो राजा ने मानसिंह के परिवार को खत्म कर वहां की सत्ता हथिया ली। ऐसे में मानसिंह ने वापस न लौटकर सरगुजा के शासक को अपदस्थ करके सत्ता हथिया ली। तत्पश्चात सरगुजा में रक्सेल वंश की स्थापना हुई। इस वंश के प्रथम ज्ञात शासक विष्णुप्रताप सिंह थे जिनका इतिहास ईसा की दूसरी शताब्दी से आरंभ होता है। यह पलामउ के भोजकुरपुर के चंद्रवंशी राजा थे जो कि वर्तमान डीपाडीह से प्रवेश किये थे। उन्होंने यहां आदिवासी राजा सोमनी सिंह को पराजित किया और रामगढ में शासन किया। ईसवी सन 231 में उसके पुत्र देवराज ने शासन किया। इसके बाद का इतिहास धुंधला है और इस वंश का इतिहास 1613 से पुनः क्रमिक रूप से आरंभ होता है। सन 1820 में अमर सिंह को महाराजा पदवी प्रदान की गई। बाद में 1882 में रघुनाथ शरण सिंहदेव महाराजा बनें इन्हें तत्कालीन लार्ड डफरिन द्वारा सम्मानित किया गया था। वर्तमान में इसी रक्सेल वंश के 117 वीं पीढी के वंशज और सरगुजा रियासत के राजा त्रिभुनेश्वरी शरण सिंहदेव हैं। श्री सिंहदेव वर्तमान में सरगुजा से विधायक हैं और छत्तीसगढ शासन में मंत्री हैं। यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि सरगुजा के रक्सेल राजवंश का शासन दो हजार वर्षों से चला आ रहा है।

सरगुजा अंचल प्रागैतिहासिक काल में रामायण और महाभारत की घटनाओं से संबंधित रहा है। यहां पर रामायणकालीन मिथकों की प्रचुरता है। सरगुजा प्राचीन दंडकारण्य का एक भाग है। किंवदंती है कि राम ने वनवास इसी क्षेत्र में रामगिरि पर्वत पर काटा था। यहां सीताबेंगरा तथा लक्ष्मण बेंगरा नामक गुफायें हैं वहीं सीता कुंड का भी अस्तित्व हैं। माना जाता है कि राम ने जहां विश्राम किया था, वह बिश्रामपुर कहलाता था। 1916 के बाद यही बिश्रामपुर वर्तमान अंबिकापुर कहलाता है। यहां का प्राचीन इतिहास महाभारतकाल से भी संबद्ध है। जनश्रुति है कि पांडवों ने अपना अज्ञातवास यहीं व्यतीत किया था। उनके यहां रहने से स्थानीय लोगों में संतति हुई और इसलिए वे पंडो कहलाये। आज पंडो जनजाति है और वे अच्छे धनुर्धर हैं। ईसा पूर्व छठवीं शताब्दी यह क्षेत्र मगध के नंद वंश तथा मौर्यों के साम्राज्य का अंग था। रामगिरि पर्वत पर स्थित रामगढ की प्राचीन नाटयशाला विश्व की प्राचीन नाट्यशाला में से एक है। यह नाटयशाला बौद्धकालीन मानी गई है। यहां बौद्धकालीन दो भित्तिलेख प्राप्त हुए हैं जिनकी भाषा पालि है। कालांतर में यह क्षेत्र शुंग वंश और कलिंग नरेश खारवेल तथा महेंद्र के प्रभाव क्षेत्र में रहा। यहां सातवाहन शासन के प्रमाण के रूप में कुछ सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। चौथी इसवी शताब्दी में चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के काल में महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य 'मेघदूतं' में रामगिरि से उज्जैन तक के मार्ग का वर्णन किया है। ऐसा माना जाता है कि यह रामगिरि ही रामगढ़ था, जहां

कालिदास ने अपने महाकाव्य की रचना की। कालांतर में सरगुजा सातवीं शताब्दी में हर्षवर्धन के राज्य क्षेत्र में रहा था।

राजपूत युग में सरगुजा हैहयवंशीय कलचुरि राजाओं के अधीन आया जिनकी राजधानी रतनपुर थी। कलचुरियों का कार्यकाल लंबे समय तक रहा। उनका शासनकाल प्रत्यक्षतः नहीं रहा क्योंकि स्थानीय आदिवासी जमींदारों की यहां पहले से सक्रियता थी। इसके अलावा सघन वन और उंची नीची भूमि, आवागमन के साधनों का अभाव तथा विरल जनसंख्या दूर बैठे शासकों से प्रत्यक्ष शासन की स्थिति का निर्माण नहीं करती थी। सरगुजा क्षेत्र सैन्य मामलों खासकर युद्ध हेतु हाथियों की आपूर्ति का बडा केंद्र था। मालवा और गुजरात इन हाथियों के सबसे बडे खरीददार थे।

मुगलकाल में अकबर के अधीन 15 सूबों में सरगुजा इलाहाबाद सूबे में आ गया। इस सूबे का सूबेदार आसफ खां था। इसके बावजूद रतनपुर के शासक मुगलों को वार्षिक कर देते थे अतः उन्हे अपने क्षेत्र में अपना शासन चलाने की छूट थी इसलिए मुगल शासन का यहां प्रत्यक्ष दखल कभी नहीं रहा। इसमें उदयपुर का उल्लेख करना समीचीन होगा। उदयपुर सरगुजा रियासत के अंतर्गत एक जमींदारी है जिससे सरगुजा रियासत का पारिवारिक नाता है। यहां का राजा सरगुजा रियासत के वंशज ही बनते थे।

मराठा काल में सरगुजा का राजनीतिक इतिहास नए युग में प्रवेश करता है। 1741 में रघुजी के सेनापति भास्कर पंत ने रतनपुर के हैहय शासकों को मराठा अधीनता के लिए बाध्य किया और ऐसे समय में इस क्षेत्र के राजपूत शासकों ने अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने की कोशिश की, तब 1758 में बिंबाजी भोंसले ने सरगुजा राज्य पर आक्रमण कियां। इससे घबराकर सरगुजा के शासकों ने मराठों की अधीनता स्वीकार कर ली। बिंबाजी की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी आनंदीबाई ने महिपत दिनकर के हाथों रतनपुर से प्रशासन संचालित किया। यहॉ से सरगुजा और कोरिया रियासत सूबा सिस्टम में चलने लगे। उनकी कर व्यवस्था टाकोली के भार से यह क्षेत्र दबने लगा। मराठों ने गंगा के मैदान के लिए अपना मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य से एक बार आक्रमण भी किया। तत्कालीन राजा शिव सिंह ने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली और मराठों को 3000 रुपया वार्षिक कर देने के साथ मिर्जापुर तक आक्रमण हेतु मार्ग प्रशस्त करने का आश्वासन भी दिया। मराठों ने सरगुजा में टाकोली वसूली तक ही स्वयं को सीमित रखा। प्रशासन में दखन नही दिया। इसका प्रमुख कारण इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति थी।

सन 1817 में हुए अप्पा साहब और अंग्रेजों के बीच हुए सीताबर्डी के युद्ध के बाद 1818 की संधि के अनुसार अप्पा साहब को अपनी रियासतें ब्रिटिश सरकार को देनी पडीं। इसके साथ ही यह क्षेत्र मराठों के हाथ से निकलकर अंग्रेजों के हाथ में आ गयां। इस समय भारत का गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्ज था। इसके पूर्व सरगुजा के संबंध में एक विवरण प्रस्तुत करना आवश्यक होगा। सन 1799 में एच.टी. कॉलब्रुक मिर्जापुर से सरगुजा होता हुआ नागपुर गया। उसने सरगुजा का सजीव वर्णन किया है। वह लिखता है –

''सरगुजा बरार का करद राज्य है। यह एक राजपूत परिवार से संबंधित है, जिसका उत्तराधिकारी अब एक नाबालिग है, ऐसा बताया जाता है कि उसके पिता तथा पूर्वज की हत्या उसके चाचा और राजा के वर्तमान संरक्षक ने कराई थी तथा राजा का भी अपने मिशन से संबंधियों के हाथों वही हश्र होनेवाला है।''

यह सब वास्तव में घटित हुआ था और सरगुजा की सत्ता को बलभद्र सिंह ने 1813 में हस्तगत कर लिया था। इस समय सरगुजा के मामले को ब्रिटिश सुपरिंटेंडेंट कैप्टन सिनांक देख रहा था। 1820 में बलभद्र सिंह के भतीजे अमर सिंह को सरगुजा का राजा घोषित किया गया। 1826 में उन्हें 'महाराजा' घोषित किया गया। वे एक योग्य शासक थे। उनकी मृत्यु के बाद उनकी बडी पत्नी के पुत्र इंद्रजीत सिंह उत्तराधिकारी हुए पर वे मानसिक रूप से कमजोर थे। अतः छोटी रानी के पुत्र बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह के द्वारा सरगुजा का प्रबंधन किया जाता रहा। इसी समय 1857 की क्रांति हुई थी। इस क्रांति का प्रभाव सरगुजा में पड़ा। चूंकि शासक की निष्ठा ब्रिटिश सरकार के प्रति थी इसलिए सरगुजा में हुए आंदोलनों का दमन करने में सफल रहे। इस क्रांति का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

बोगता जनजाति जो वर्तमान बलरामपुर जिले और उधर पलामू क्षेत्र में रहते थे, उस क्षेत्र के जागीरदार नीलाम्बर और पिताम्बर ने 1857 की क्रांति में भाग लिया था। पलामू का असिस्टेंट कमिश्नर ग्राहम ने सरगुजा के प्रबंधकर्ता बिंदेश्वरी प्रसाद और आसपास के जमींदारों की मदद से उस विद्रोह का दमन किया था।

सन 1882 में रघुनाथ शरण सिंहदेव उत्तराधिकारी बने। इनके काल में सरगुजा में प्रशासनिक रूप से सुदृढ हुआ। उन्होंने 10 न्यायालय, 25 प्राथमिक शालाएं, एडवर्ड माध्यमिक शाला, जेल, एक अस्पताल, 17 डाकघर, पांच बगीचे और तारघर आरंभ करवाये। इन्होंने ही भव्य रघुनाथ महल का निर्माण करवाया। उदयपुर तथा गढ़वा तक अच्छी सडकों का निर्माण करवाया था। वे ब्रिटिश प्रशासनिक सुधार करनेवाले प्रथम शासक थे।

सन् 1905 में बंगाल विभाजन के बाद सरगुजा का मध्य प्रांत बरार में आ गया। इस समय सरगुजा की राजधानी बिश्रामपुर थी। सरगुजा के आधुनिक इतिहास में महत्वपूर्ण मोड़ तब आया जब 1918 को महाराजा रामानुजशरण सिंहदेव 23 वर्ष की अवस्था में सरगुजा की गद्दी पर बैठे। इन्हें तत्कालीन वाइसराय लार्ड चेम्सफोर्ड के पॉलिटिकल एजेंट एल. एफ. कॉफोर्ड ने स्वयं उपस्थित होकर एक विशेष तलवार देकर 'खानदानी महाराजा' की पदवी का एलान किया। इन्हें राजकीय कार्यों में पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की गई थी। इनका व्यक्तित्व बहुआयामी था। वे तब के विश्वप्रसिद्ध शिकारी थे। उनके नाम 1157 शेर मारने का रिकार्ड दर्ज है। इन्हें इस योग्यता के कारण अफ्रीका से भी बुलावा आया था।

इस काल में एक महत्वपूर्ण आंदोलन ताना भगत आंदोलन था। यह रांची में जतरा उरांव के नेतृत्व में अप्रैल 1914 में आरंभ हुआ था। यह स्थानीय जमींदारों के साथ मिलकर आम नागरिकों का अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन था। इसमें कहा गया कि लगान नहीं देंगे। यह जमीरापाट तक फैल गया था और सरगुजा रियासत तक आ गया था। इसमें उरांव और नगेशिया जनजाति के लोग थे। इसमें लोग एक जगह एकत्र होकर 'ताना' गीत गाते। जतरा उरांव को गिरफ्तार कर लिया गया पर एक अनहोनी हो गई। अप्रैल 1918 में सरगुजा स्टेट के मजिस्ट्रेट, तहसीलदार और अन्य कर्मचारी छेछारी जमींदारी और रियासत के झगड़े का निपटारा करने पलामउ की ओर बढ रहे थे, तभी विद्रोहियों ने हमला कर दिया और उनकी हत्या कर दी। तब रामानुजशरण सिंहदेव ने अंग्रेजो की सहायता ली। इस बीच विद्रोहियों ने सामरी पाट में बड़ा उपद्रव किया और 14 गांव लूट लिए तथा 51 व्यक्तियों की हत्या कर दी। इसमें सरगुजा रियासत के 9 कर्मचारी थे। ब्रिटिश सैन्य बल की मदद से केंदा पाइन घाट में विद्रोहियों से संघर्ष हुआ और कुछ को मार डाला गया और कुछ को गिरफ्तार कर लिया गया। सरगुजा में यह विद्रोह अपेक्षाकृत कमजोर था।

किंतु ब्रिटिश सरकार के खिलाफ राष्ट्रीय विरोध के माहौल से सरगुजा भी अछूता न रहा और रामानुजशरण सिंहदेव ने 1939 में हुए कांग्रेस के त्रिपुरी अधिवेशन में रसद पहुंचाई थी। उन्होंने हर खतरे के बावजूद कांग्रेस को समर्थन दिया था। यह स्पष्ट तौर पर 1942 के भारत छोडो आंदोलन में दिखाई दिया। इस आंदोलन में सरगुजा में राष्ट्रीय चेतना में अत्यंत सक्रियता के लिए डमरू अहीर का नाम पलामू एसपी ने अपनी डायरी में दर्ज किया था। 15 अगस्त 1947 को देश की आजादी का पर्व सरगुजा में भी धूमधाम से मनाया गया। 15 दिसंबर 1947 को सरदार वल्लभभाई पटेल नागपुर में छत्तीसगढ के रियासतों के शासकों से मिले और संविलियन समझौते के तहत सरगुजा युवराज ने 19 दिसंबर 1947 को इस पर हस्ताक्षर किये। 01 जनवरी 1948 को सरगुजा मध्य प्रांत का एक जिला बन गया जिसकी राजधानी नागपुर थी। इसमें कोरिया और चांगभखार रियासत को भी शामिल किया गया।

इस प्राचीन रियासत के राजनीतिक घटनाक्रम उथलपुथल भरे और महत्वपूर्ण रहे है। सरगुजा के समीप के तमाम जमींदारियों यथा – उदयपुर, लखनपुर, शंकरगढ, कोरिया आदि से संबंध और 1857 की क्रांति आदि में सक्रियता से पूर्ण इतिहास अत्यंत रोचक है। सरगुजा के राजनैतिक इतिहास में स्थानीय द्रविड वंशीय अर्थात आदिवासी राजाओं का इतिहास अत्यंत महत्वपूर्ण है किंतु उनसे संबद्ध प्रामाणिक तथ्यों का अभाव है। यहां का राजनैतिक इतिहास एक मिश्रित और रोचक इतिहास रहा है जिसे नये शोध और अध्ययन के आलोक में पुनः लिखे जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1 गुप्ता प्यारेलाल – छत्तीसगढ़ इतिहास
2 गुप्त मदन लाल – छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन
3 मंदिलवार, सचिन – अंबिका–अभ्युदय
4 डॉ. सचिन मंदिलवार –सरगुजा दर्शन
5 मिश्र रमेन्द्र नाथ – छत्तीसगढ़ का इतिहास

6 शुक्ल, हीरालाल, तथा अन्य – समग्र छत्तीसगढ़
7 वर्मा, भगवान सिंह – छत्तीसगढ़ का इतिहास
8 बेहार रामकुमार – छत्तीसगढ़ का इतिहास
9 सुरजन, ललित –संदर्भ छत्तीसगढ़

LBP PUBLICATION